वीर निर्वाण चतुर्दशी को या अमावस्या को ?

~ प्रो.डॉ. अनेकांत कुमार जैन, नई दिल्ली

दीपावली भारत का एक ऐसा पवित्र पर्व है जिसका सम्बन्ध भारतीय संस्कृति की सभी परम्पराओं से है ।भारतीय संस्कृति के प्राचीन जैन धर्म में इस पर्व को मनाने के अपने मौलिक कारण हैं ।आइये आज हम इस अवसर पर दीपावली के जैन महत्त्व को समझें ।ईसा से लगभग ५२७ वर्ष पूर्व कार्तिक मास कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि के समापन होते ही स्वाति नक्षत्र में जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर का वर्तमान में बिहार प्रान्त में स्थित पावापुरी से निर्वाण हुआ था। भारत की जनता ने अमावस्या को प्रातः काल जिनेन्द्र भगवान की पूजा कर निर्वाण लाडू (नैवेद्य) चढा कर पावन दिवस को उत्साह पूर्वक मनाया । यह उत्सव आज भी अत्यंत आध्यात्मिकता के साथ देश विदेश में मनाया जाता है । इसी दिन रात्रि को शुभ-बेला में भगवान महावीर के प्रमुख प्रथम शिष्य गणधर गौतम स्वामी को केवल ज्ञान रुपी लक्ष्मी की प्राप्ति हुई थी ।

तिलोयपण्णत्ति में आचार्य यतिवृषभ(प्रथम शती)लिखते हैं –

कत्तिय-किण्हे चोद्दसि,पज्जूसे सादि-णाम-णक्खत्ते ।

पावाए णयरीए,एक्को वीरेसरो सिद्धो ।। (गाथा १/१२१९)

अर्थात् वीर जिनेश्वर कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी के प्रत्यूषकाल में स्वाति नामक नक्षत्र के रहते पावानगरी से अकेले ही सिद्ध हुए।

पूज्यपाद स्वामी (छठी शती)निर्वाण भक्ति की आंचलिका में लिखते हैं-

अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए,अट्ठमासहीणे वासचउक्कमि सेसकालम्मि

पावाए णयरीए कत्तिए मसस्स किण्हचउदसिए रत्तिए सादीए णक्खते,पच्चूसे भगवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो ।

अर्थात् इस अवसर्पिणी सम्बन्धी चतुर्थ काल के पिछले भाग में साढ़े तीन माह कम चार वर्ष शेष रहते पावानगरी में कार्तिक मास की कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि में स्वाति नक्षत्र रहते प्रत्यूषकाल में भगवान् महति महावीर वर्धमान परिनिर्वाण को प्राप्त हुए ।यहाँ एक बात समझने योग्य है कि रात्रि की समाप्ति और दिन का आगमन, इन दोनों के बीच के काल को प्रत्यूषकाल कहते हैं ।

प्रथम शताब्दी के प्राकृत आगम कसायपाहुड की जयधवला टीका (8 शती) में उल्लिखित है -

'कत्तियमास किण्ह पक्ख चौदस दिवस केवलणाणेण सह एत्थ गमिय परिणिव्वुओ वड्ढमाणो ।

अमावसीए परिणिव्वाण पूजा सयल देविहिं कया ।'

अर्थात् कार्तिक मास की कृष्ण पक्ष चतुर्दशी को भगवान् वर्धमान निर्वाण गये और अमावस्या को समस्त देवों ने निर्वाण पूजा की ।

दिगंबर आचार्य जिनसेन (नवमी शती) कृत हरिवंश पुराण /सर्ग ६६ /श्लोक १५-२१/पृष्ठ ८०५-८०६ पर कहते हैं कि भगवान् महावीर के निर्वाण कल्याण की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरत क्षेत्र में प्रतिवर्ष आदर पूर्वक दीपमालिका (अर्थात् दीपकों के) द्वारा भगवान् महावीर की पूजा के लिए उद्यत रहने लगे –

जिनेंद्रवीरोऽपि विबोध्य संततं, समन्ततो भव्यसमूहसन्ततिम् ।

प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं, मनोहरोद्यानवने तदीयके ।।

चतुर्थकालेऽर्धचतुर्थमासवै-र्विहीनताविश्चतुरब्दशेषके ।

स कार्तिके स्वातिषु कृष्णभूतसु-प्रभातसन्ध्यासमये स्वभावत: ।।

अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको, विधूय घातीन्धनवद् विबंधन: ।

विबन्धनस्थानमवाप शंकरो, निरन्तरायोरूसुखानुबन्धनम् ।।

स पञ्चकल्याणमहामहेश्वर:, प्रसिद्धनिर्वाणमहे चतुर्विधै: ।

शरीरपूजाविधिना विधानत:, सुरै: समभ्यच्र्यत सिद्धशासन: ।।

ज्वलत्प्रदीपालिकया प्रवृद्धया, सुरासुरैर्दीपितया प्रदीप्तया ।

तदा स्म पावानगरी समन्तत:, प्रदीपिताकाशतला प्रकाशते ।।

तथैव च श्रेणिकपूर्वभूभुज:, प्रकृत्य कल्याणमहं सहप्रजा: ।

प्रजग्मुरिन्द्राश्च सुरैर्यथायथं, प्रभुचमाना जिनबोधिमर्थिन: ।।

ततस्तु लोक: प्रतिवर्षमादरात्, प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते ।

समुद्यत: पूजयितुं जिनेश्वरं, जिनेन्द्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक् ।।

सार यही है कि भगवान महावीर पावापुरी के मनोहर उद्यान में विराजमान हुए। जब चतुर्थकाल में तीन वर्ष साढ़े आठ मास बाकी रहे तब स्वाति नक्षत्र में कार्तिक अमावस्या के दिन प्रात:-उषाकाल के समय स्वभाव से योग निरोधकर शुक्लध्यान के द्वारा सर्वकर्म नष्ट कर निर्वाण को प्राप्त हो गये। उस समय चार निकाय के देवों ने विधिपूर्वक भगवान के शरीर की पूजा की। अनन्तर सुर-असुरों द्वारा जलाई हुई बहुत भारी देदीप्यमान दीपकों की पंक्ति से पावानगरी का आकाश सब ओर से जगमगा उठा। श्रेणिक आदि राजाओं ने भी प्रजा के साथ मिलकर भगवान के निर्वाणकल्याणक की पूजा की पुन: रत्नत्रय की याचना करते हुए सभी इन्द्र, मनुष्य आदि अपने-अपने स्थान चले गये। उस समय से लेकर भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरतक्षेत्र में प्रतिवर्ष आदरपूर्वक प्रसिद्ध [दीपमालिका] के द्वारा भगवान महावीर की पूजा करने के लिए उद्यत रहने लगे अर्थात् भगवान् के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में दीपावली पर्व मनाने लगे।

आलापपद्धति ग्रन्थ में भूतनैगम का उदाहरण देते समय दिगंबर आचार्य देवसेन कहते हैं कि जो नय अतीत क्रिया में वर्तमान का आरोप कर आज 'दीपोत्सव' को श्री महावीर भगवान् निर्वाण को प्राप्त हुए इस प्रकार यह भूत नैगम नय द्रव्यार्थिक नय है –

"अतीते वर्तमानारोपणं यत्र स भूतनैगमो ।यथा – अद्य दीपोत्सवदिने श्रीवर्धमानस्वामी मोक्षं गतः ।" (६५)

नवमी शती के श्वेताम्बर आचार्य शीलांक के प्राकृत भाषा के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'चउप्पनमहापुरिसचरिय' में गाथा ७८९ के बाद लिखा है भगवान् महावीर के निर्वाण का यह दिन 'दीपोत्सव' के नाम से प्रसिद्ध हुआ – 'एवं सुरगणपहासमुज्ज्यं तम्मि दिणे सयलं महिमण्डलं दटठूण तह चेय कीरमाणे जणवएण 'दीवोसवो' त्ति पसिद्धिं गओ ।' (वद्धमाणसामिणिव्वाणं २७)

सबसे प्राचीन 'वीर निर्वाण संवत्' का शुभारम्भ -

ईसा से ५२७ वर्ष पूर्व कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी / अमावस्या (शास्त्र में दोनों तिथियों के प्रमाण हैं) को स्वाति नक्षत्र (इस प्रकरण में नक्षत्र ज्यादा महत्वपूर्ण है) में दीपावली के दिन भगवान् महावीर का निर्वाण हुआ था ,उसके एक दिन बाद कार्तिक शुक्ला एकम् से भारतवर्ष का सबसे प्राचीन संवत् "वीर निर्वाण संवत्" भी प्रारंभ हुआ था । श्वेताम्बर आगम कल्पसूत्र में स्पष्ट लिखा है ....बीए दिवसे कत्तिय सुद्धपडिवयाए...तेणं तं दिवसं नूयणवरिसारम्भदिवसतत्तेण पसिद्धं जायं ।(सूत्र ११६)

यह भारत का सबसे प्राचीन नव वर्ष है ।यह हिजरी, विक्रम, ईसवी, शक आदि सभी संवतों से भी अधिक पुराना है । जैन परंपरा के प्राकृत तथा संस्कृत भाषा के प्राचीन ग्रंथों/पांडुलिपियों में तो इस बात के अनेक प्रमाण है ही साथ ही पुरातात्विक साक्ष्यों से भी यह संवत् सबसे अधिक प्राचीन सिद्ध होता है ।

राजस्थान के अजमेर जिले में भिनय तहसील के अंतर्गत वडली एक गाँव है ।सुप्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डॉ गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने १९१२ ईश्वी में वडली के शिलालेख की खोज की थी । वडली के शिलालेख में वीर निर्वाण संवत का उल्लेख हुआ है । यह 'वीर' शब्द महावीर स्वामी के लिए आया है ।इस शिलालेख पर '८४ वीर संवत' लिखा है । भगवान् महावीर के निर्वाण के ८४ वें वर्ष में यह शिलालेख लिखा गया ।अतः ईसा से ४४३ वर्ष पूर्व का यह प्रमाण है ।सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ राजबली पाण्डेय ने अपनी पुस्तक इंडियन पैलियो ग्राफी के पृष्ठ १८० पर लिखा है कि 'अशोक के पूर्व के शिलालेखों में तिथि अंकित करने की परंपरा नहीं थी,बडली का शिलालेख तो एक अपवाद है ।' इस विषय पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी में कला संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग की प्रो सुमन ने बहुत प्रामाणिक शोधपत्र भी केन्या में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत किया था ।

अभी तक इस शिलालेख से पूर्व का कोई भी प्रमाण नहीं है जो वीर निर्वाण संवत के अलावा किसी और संवत् की परंपरा को दर्शाता हो । फिलहाल यह शिलालेख अजमेर के राजपूताना संग्रहालय में सुरक्षित है ।

दीपावली पर आतिशबाजी का कोई भी प्राचीन उल्लेख प्राप्त नहीं होता है ,जैन परंपरा के अनुसार पटाखा आदि चलाना अत्यंत हिंसक होने से पाप बंध का कारण होता है ।पर्यावरण प्रदूषण होने से भी यह अनुकूल नहीं है ।हमारे त्यौहार की लगभग सभी क्रियाएं प्रतीकात्मक होती हैं उसके पीछे उनके आध्यात्मिक अर्थ छुपे हुए होते हैं ।हमारे पढ़े लिखे और सभ्य होने की एक सार्थकता यह भी है कि हम उन प्रतीकों के आध्यात्मिक भावों को भी समझ कर और अपना कर चलें ।दीपावली उत्सव का एक अर्थ यह भी है कि हम अपनी आत्मा से क्रोध, मान ,माया और लोभ जैसी कषायों के कचड़े को ज्ञान रुपी बुहारी से साफ़ कर दें ,फिर आत्म विशुद्धि की सफेदी करके वहां ज्ञानोपयोग का दीपक जलाकर शुद्धोपयोग का पकवान बनाना है ताकि आत्मानुभूति के चिर आनंद में रमकर हम मुक्ति महल को प्राप्त कर सकें ।